अंतरा-शब्दशक्ति

द्वंद

काव्य संग्रह

रचना सक्सेना

द्वंद

(काव्य संग्रह)

रचना सक्सेना

अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन

इंदौर,मध्यप्रदेश

ISBN- 978-93-88102-36-0

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन

कार्यालय: १५ नेहरु चौक वारासिवनी,जिला बालाघाट (म.प्र) ४८१३३१

शाखा: एस-२०७, नवीन भवन, इंदौर प्रेस क्लब परिसर, इंदौर (म.प्र.) ४५२००१

दूरभाष: (कार्या) ०७६३३-२५३१५९ मो ९४२४७६५२५९

अणुडाक -antrashabshakti@gmail.com

अंतरताना- www.antrashabdshakti.com

प्रथम संस्करण २०१८ © रचना सक्सेना

मूल्य: ४०.०० रुपये

आवरण चित्र : संदीप सोनी, वारासिवनी

मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी

"Dwand' by Rachna Saxena'

वैधानिक चेतावनी : इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है | लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकापी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम से अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुरुत्पार्दित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता हैं |प्रस्तृत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई हैं | अत : प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु प्रत्येक लेखक जिम्मेदार हैं| प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र,भाषाशैली,एवं स्थान सभी लखक की कल्पना हैं | किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं हैं

भूमिका

कवि विचारों के सागर मे डूबकर जिस अनमोल मोती को खोजता है, उसे वह अपनी वेदना-संवेदनानुभूति के द्वारा काव्य रचना के रूप मे प्रस्तुत कर देता है। आदरणीय पाठकों- प्रस्तुत काव्य संकलन में हमनें भी अपनी कुछ उन श्रेष्ठ रचनाओ को आपके सम्मुख प्रस्तुत करने का प्रयास किया है, जिनके माध्यम से हमने नारी के विभिन्न रूपों में उनके मनोभावों का स्पष्टीकरण किया है। चूँकि मैं स्वयं एक नारी हूँ। इसलिए मैंने बचपन से लेकर अब तक उम्र-दर-उम्र जिन अनुभवों को सहेजा है, जिन वेदनाओं और पीढ़ाओं को अनुभव किया है उन्हीं वेदनाओं और पीढ़ाओं को हमने नारी जाति में झाकनें का प्रयास किया है। कभी मातृत्व रुप में तो कभी सास के स्वरुप में, कभी बहिन में तो कभी ननद में, कभी बेटी में तो कभी बहू के रुप में और नारी के पारिवारिक रिश्तों का अन्तर्मन की गहराई में उतरने के पश्चात् जो कुछ सार सुधा प्राप्त हुई है, वह सब शब्दो की सरिता बनकर कागज पर उतर गई।

यह शब्दों की वेणी- कभी सपनों को बाँधने का प्रयास करती है, तो कभी उनके मूर्त रूप को ही स्पष्ट कर देती है।
कभी मधुर गीत बनकर प्रस्तुत हो जाते है तो कभी एक काव्य रचना। हमारी ये रचनाएँ- प्रेम-स्नेह, घृणा-अवसाद, मिलन-वियोग, समर्पण अधिकार सुख और दुख सभी मनोभावों का मिश्रण है।

मैने अपने इस काव्य संग्रह का नाम 'द्वंद्' दिया है क्योंकि- नारी जीवन का शैशवकाल एक बेटी के रूप मे जन्म लेता है और यदि बेटी अपने भावी जीवन से संबन्धित कल्पनाओं से द्वंद करती है तो एक बहू अपने नये जीवन मे प्रवेश करने पर नये रिश्तों और नये पारिवारिक परिवेश से द्वंद्व करती है। पत्नी बनकर कभी वह प्रेम बिखेरती है तो कभी माँ बनकर ममता, बहू बनकर गृहस्थी का बोझ उठाते हुऐ बड़े बुजुर्गों के प्रति कर्तव्यों का पालन करती है, तो कभी सास बनकर पारिवारिक दायित्वों को भली-भाँति निभाती है।

आदरणीय पाठकों आशा है - मेरे इस काव्य संग्रह को पढ़कर आप अवश्य ही एक नारी मन की गहराई को महसूस करेंगे।
जी सादर धन्यवाद।

-रचना सक्सेना

इलाहाबाद (प्रयागराज) उ. प्र.

अनुक्रमणिका

जीवन रथ 5

यौवन 6

बेटियाँ 8

माँ की चूड़ियाँ 9

शेष रहा क्या? 10

द्वंद 11

जीवन रथ

साथ बढ़े है, अपने पग, इस जीवन पथ पर।
साथ जड़े है कंचन नग, इस जीवन रथ पर।

तुम दीप बने अँधियारे के, अंधियारा छिपा परछाई में।
हम बनकर बाती जलते रहे, जो बुझ न सका पुरवाई में।
तुम दीपक और मैं बाती, इस जीवन पथ पर।
साथ जड़े है कंचन नग, इस जीवन रथ पर।

तुम पाती बने जो तरूवर के, तो धूप छिपी तन्हाई में।
हम बनकर फूल खिलते रहे, उड़ चली महक पुरवाई में।
मैं फूल और तुम पाती, इस जीवन पथ पर।
साथ जड़े है कंचन नग, इस जीवन रथ पर।

तुम गीत बने जो मीरा के, वह प्रेम दिखा कन्हाई में।
हम बनकर भाव उठते रहे, जो गूँज उठा पुरवाई में।
तुम गीत मेरे, मैं गाती, इस जीवन पथ पर।
साथ जड़े है कँचन नग, इस जीवन रथ पर।

यौवन

गीत मिलन के मिलकर गाते, जो तुम आ जाते।
उड़नखटोले पर बैठ कर दोनों, फिर नभ तक जाते।
तारों की झंकार बजाकर, अपने अपने राग सुनाते।
गीत प्रेम के मिलकर गाते,जो तुम आ जाते।

यौवन के बढ़ते कदमो को, नित देख रही थी।
सजकर बैठी एक बाला, यह सोच रही थी।
दस्तक सुनकर बाबुल की, शरमाई कुछ सकुचाई।
रूद्रन माता के स्वरों की, सुन पास में आई।
मौन रही निःस्तब्ध रही, नयनो से बस नीर था गिरता,
जाने कब बाला दुल्हन सज गई, सपनो मे बस एक था रहता।

माथे पर बिंदिया सज गई,नयनो में तो काजल।
हाथों में चूड़ी की खनखन, पैरों में तो पायल।
लाल चुनर से सजकर गोरी, साजन को थी पागल,
डाल वरमाला जाकर बैठी, डोली मे फिर आकर,
घूँघट के पट खोल अकेली, सकुचाती घबराती-सी।
खो गई फिर से सपनों में, यौवन की अंगड़ाई में।

आँख खुली तो पास खड़ी थी, थाल लिये प्यारी सास खड़ी थी।
मंगल गीत स्वरों से गुंजित, वर को लेकर पास खड़ी थी।

ऊषा की उगती किरणों से, जो यह यौवन चमक रहा था,
मलिन पड़ा था ओढ़े चादर, टूटी आशाओ से घिरता।
इठलाती बलखाती-सी, घबराती सकुचाती-सी।
मुसकाती सिसकाती-सी, शरमाती बलखाती-सी।

अंगड़ाई लेकर के एकदम, आहट सुन रूक जाती थी।
हाय! सुनो कब आओगे, गीत मिलन के तुम गाओगे।
आहट पैरों के चलने की, सुन कर मन डोल गया।
घूँघट में छिपते मुखड़े को, देख सजन तन डोल गया।
उड़नखटोले पर बैठ कर पंछी, घूमे अंबर सारा।
प्रेमगीत के स्वर से गूंजित, तन मन उनका सारा।

वर के वरदान से बोझिल, हो गई दुल्हन प्यारी।
गोद मे एक लाल खेल रहा, खींचे पल्लू साड़ी।
लोरी के गीतों से सजकर, गुँजित आँगन सारा।
न तो अब वह प्रेमी था,न वह प्रियतम प्यारा।
भूली बिसरी यादों में,कब बीता, यौवन सारा?
मातृत्व से होकर ओझल, बदल गया जीवन सारा।

बेटियाँ

नाज़ो में पली, नख़रों से सजी,
छोड़ जाती हैं अपनी यादें -
प्यार की सिलवटों में छिपाकर,
माँ की धड़कनो में जाके।
डोली में बैठकर चली जाती हैं-
ससुराल - अपनी प्यारी बेटियाँ।

न रहते जलवे, न ही वे अदाएँ,
छोड़ जाती हैं अपनी बातें -
नींद की करवटों में छिपाकर,
पिता की बाहों के सहारे।
पराई बनकर चली जाती हैं -
ससुराल - अपनी लाडली बेटियाँ।

उड़ जाती हैं, बहुत दूर गगन में,
छोड़कर अपनी हरी भरी धरती।
नभ की बादल-सी बनकर ,
नम कर देती हैं तरसती आँखें।
बहू बनकर चली जाती हैं-
ससुराल - अपने घर की बेटियाँ।

माँ की चूड़ियाँ

जब भी होती हूँ अकेली,
गूँजती कानों में,
माँ की चूड़ियाँ।
थपथपाती और सुलाती,
कानों को,
सुनाती मीठी लोरियाँ।
सीने से चिपकाती,दुलारती,
खनखनाती माँ के हाथों में,
प्यारी चूड़ियाँ।

जब भी लगती मुझे भूख,
गूँजती कानों में,
माँ की चूड़ियाँ।
बेलती और बढ़ाती लोई को,
सेकती सोंधी रोटिंयाँ।
प्यार से बनाती, खिलाती,
खनखनाती माँ के हाथों में ,
प्यारी चूड़ियाँ।

जब भी महसूस होती थकान,
गूँजती कानों में,
माँ की चूड़ियाँ।
सहलाती और दबाती माथे को,
फहराती नरम उँगलियाँ।
प्यार को झलकाती, पुचकारती,
खनखनाती माँ के हाथो में,
प्यारी चूड़ियाँ।

जब भी पास होती उलझने,
गूँजती कानों में,
माँ की चूड़ियाँ।
पढ़ाती और समझाती किताबों को,
बताती मेरी गल्तियाँ।
लिखाती और बिगाड़ती,
खनखनाती माँ के हाथों में,
प्यारी चूड़ियाँ।

जब भी पास होती खुशियाँ,
गूँजती कानों में,
माँ की चूड़ियाँ।
हँसती और हँसाती,
ओठों को,
गुदगुदाती मेरी बगले,
खनखनाती माँ के हाथों में,
प्यारी चूड़ियाँ।

शेष रहा क्या?

शेष रहा क्या? अपना अब तो,
लड़ियाँ परिणय में गूँथ दी।
रंग पिया के सारे लेकर,
आँचल को अपने रंग ली।

प्रिय ही श्रृंगार अब सारा,
प्रियतम ही सुहाग सदा।
उन अधरों के चुंबन से,
धरती का संसार बना।

धूप छाँव आँधी पानी से,
हर शाम यहाँ उसने चुन ली।
शेष रहा क्या? अपना अब तो,
गलियाँ साजन की चुन ली।

पतझड़ के सूखे पत्तो से,
सावन की हरियाली तक।
ढूँढ रही एक काया अपनी,
एक दर्पण मे परछाई पर।

देख चौथ का चाँद अंबर में,
पूजा की थाली सज ली।
शेष रहा क्या? अपना अब तो,
घड़ियाँ साजन की गिन ली।

रतिभाव से चौक सजाती,
आँगन मे दीपक रखती।
लम्बी उम्र की दुआ करती,
तस्वीर हृदय में जो बसती।

पथ के हर चौराहों पर,
काँटे जीवन के चुनती,
शेष रहा क्या? अपना अब तो,
साजन के रँग मे रँगती।

द्वंद

ममता की छाँव तले,
कुछ मोती सपनों के चुनती।
एक माता अपनें हाथों से,
बालक को थपकी देती।
सो जा लाल हमारे, सोजा,
रात बहुत हो आई है।
निंद्रा ने आँखों में तेरी,
ले ली अब अँगड़ाई है।
मेरे सपनों मे भी तेरी,
सुंदर-सी दुल्हन आई है।
सोजा लाल हमारे सोजा,
रात बहुत हो आई है।
पैरों में पायल की छमछम,
करती देखो आई है।
हाथों में, चूड़ी की खनखन,
करती, वह क्या लाई है?
घूँघट में शर्मीला मुखड़ा,
छिपकर चाँद को लाई है।
देखो, मेरे आँगन में,
बहूरानी तेरी आई है।

ऋतुएँ कितनी अब गुजर गई?
सपनों की घड़ियाँ निकट वही।
वह देखो, मंडप के नीचे,
दुल्हे का सेहरा सजता है।
मंगलगीतों के स्वरों से,
घर आँगन गुंजित होता है।
घोड़े पर बैठ कर बालक,
दुल्हा बन कर सजता है।
माँ के नयनो से भी तब,
खुशियों का नीर बरसता है।
क्षण-क्षण ताक रहे नैन वही,
इन्तजार नहीं अब होता है।
पूजा की थाली को लेकर,
बहू स्वागत को दिल तरसता है।

आई, देखो आई,
बारात लौट कर आई।
फूलों से सुसज्जित डोली,
दुल्हन जिसमें आई।
पैर नही रुकते बेचैनी,
माँ दौड़ वहीं फिर जाती।

दुल्हे और दुल्हन के संग,
उतार रही माँ आरती।
पैरों के पायल के घूँघरु,
आँगन में छमछम बोल रहे।
हाथों में चूड़ी की खनखन,
मंदिर में घंटे बोल रहे।
घूँघट के पल्ले में छिपता,
वह सुंदर चाँद-सा मुखड़ा है।
अब रह-रह कर माँ को,
अतुलित सुख पहुँचाता है।

एक सपना माँ की आँखों का,
सजीव रूप में दिखता है।
बालक संग बहुरानी का,
जोड़ा सुंदर-सा सजता है।
दोनों के हँसते स्वरो का,
कानों में गुंजन होता है।
पर्दे के पीछे से उनके,
अहसास प्यार का मिलता है।
माँ के सपनों का तारा ,
अब आँगन में चमकता है।
खुशियों का बादल बन,
वह आँगन में बरसता है।

समय भागता तेजी से,
पदचिह्न बनाता जाता है।
अपने इन पदचिह्नों पर,
इतिहास सजाता जाता है।
इतिहास के पन्नों में खुलती,
माँ की व्यथा कहानी है।

बहू छवि रुप में दर्पण-सी,
दिखती तस्वीर पुरानी है।
कुछ घाव जो रिसते नीरों से,
रस्मों की उन जंजीरो से।
आज तोड़ती उस बंधन को,
यह बहू मिली हमारी है।
बेटे के खातिर प्यार में वह,
बहू की हुई दीवानी है।
भावना की शैय्या पर लेटी,
प्रेम संग वह खेल रही।
प्रेम ताल के नीर मे जाकर,
प्रेम नीर में डूब रही।

चंचलता मौन हुई,
हृदय पर प्रहार हुआ।
हृदय वेदन पर आकर,

दृढ़ता ने अधिकार किया।
रस्मों की माला मे गूँथकर,
चौखट पर बन्दनवार सजी।
पायल बंधन की पहने,
गोरी देहरी पर आन खड़ी।
सहनशीलता ने आकर,
धरती का स्वरुप लिया।
त्याग प्रेम और ममता ने,
सीता का संदेश दिया।
अंदर की पीड़ा को पीकर,
मन ने फिर संतोष किया।
एक कन्या ने बहूरुप में,
जाकर गृह प्रवेश किया।
डोली से उतरी जब दुल्हन,
सहृदय घर स्वीकार किया।

तारों की झिलमिल को ओढ़े,
चाँद छुपा है झाँक रहा।
जुगनूँ जैसे चमक रहे,
सितारे स्वर्णिम घाघरा।
स्वेत रंग की देह पड़ी है,
शीत ऋतु के कोहरे-सी।
उपवन मे एक कली खिली हो,
मुरझाई और कोमल-सी।
नैनों के नीर नही अब,
भूल रहे उन यादो को।
बचपन खेला आँगन जिसके,
उस बिरले से आँचल को।
साजन संग जा पहुँची,
आँगन के दरवाजे पे।
नेक माँग अठखेलियाँ करती,
ननद- भाई-भौजाई से।
आगे कदम बढ़ा तो ममता,
स्वागत करती आँखों से।
आँखों में वह छवि मिली।
स्पर्श माँ के हाथों के-
ममता के उस मर्म को छूकर,
जाग गई नवचेतना।
साजन के स्पर्श को पाकर,
शान्त हुई करुण वेदना।

सुई घूमती घड़ियों में,
समय गुजरता जाता है।
ऋतुओं के बदलते मौसम में,
दिन रात बीतता जाता है।
नई-नवेली दुल्हन का,

अब रुप पुराना लगता है।
जीवन के नये रंगो में,
साजन ही प्यारा लगता है।
कदम बढ़ाकर संग दोनों,
साथ चलते जाते है।
दुःख-सुख की, धूप-छाँव में,
साथ निभाते जाते है।
समय बीतता अब दोनों का,
एक-दूजे की राहों में।
प्यार खेलता हँसकर अब तो,
उन दोनो की बाहों में।
एक वृक्ष लगाया माँ ने जो,
हरियाली के संग झूम रहा।
छाया देकर पत्तों से वो,
फल फूलो संग झूल रहा।

माँ की आँखों का सपना,
पूरा होकर गुजर गया।
बहूरानी की आँखों में ममता,
साजन को भी झलक गया।
बहूरानी की गोदी मे अब,
लालन एक मचलता है।
बेटा भी अपने लालन संग,
बहूरानी के संग ही दिखता है।
पोता दादी के संग संग,
हरदम खेला करता है।
मौसम की बदली घड़ियों में,
माँ का रुप बदलता है।
माँ के अन्दर से उपजा,
रुप सास का दिखता है।
बेटे के ऊपर, बहूरानी का,
अधिकार बहुत ही खलता है।
यह क्या? प्रेम की गंगा में,
विष की बूँदें टपक गई।
सास-बहू के बीच में अब,
द्वन्द की लहर झलक गई।

करुणा की अंजली नीरों से,
घाव की उठती पीरों से।
तब अश्रु बरसते बादल बन,
भावों की उठती तरंगो संग।
संवेगो की सरिता बहती,
धड़कन में तड़फन-सी उठती।
वह अपना स्पर्श कराती,
मार्मिकता झलक ही जाती।
दो तन मन कैदी हो जाते,

आत्मिक प्रेम को पाते।
जब घाव नही कोई भरता,
हरदम रिसता ही रहता।
संवेगों की सरिता में,
दया भाव भी न दिखता।
आग की उठती लपटों-सा,
क्रोध प्रबल फिर हो उठता।
प्रेम का नही कोई भाव जगा,
करुणा निद्रा में पड़ा रहा।
भावों की उठती तरंगों में,
स्वार्थ जन्म तब है लेता।

सास-बहू का यह रिश्ता,
कोमल भावों से जुड़ता है।
एक दूजे के घावों में,
मलहम करुणा का लगता है।
भावों में स्पर्श प्यार का,
नित दया भाव से दिखता है।
ममता हँसती दिखती है,
बचपन खिलता मिलता है।
सास बहू का यह रिश्ता,
माँ बेटी-सा दिखता है।
जब स्वार्थ प्रबल हो उठता है,
तब न कोई अपना दिखता है।
नकारात्मक भाव जगे,
एक द्वन्द रुप में मिलता है।
दूरी इतनी बढ़ जाती है,
कि पास नही कोई दिखता है।
सास बहू का यह रिश्ता,
एक द्वन्द रूप में जगता है।

समय पथ पर थकते पग,
धड़कन थकती साँसों संग।
कानो में अब सन्नाटा,
किसने, दुख यहाँ बाँटा?
धुँधली आँखों का दीपक,
पास नही क्यों जलता अब।
जर्जर होता माँ का तन,
घबराता उनका अन्तर्मन।
ढूँढ रही वह एक लाठी,
बनें जो उनका पग साथी।
उस पौधे की लकड़ी को,
नई नवेली लगी है जो।
लहराए हैं, पात अभी,
संग जी लें हम साथ सभी।
फूल अभी महके थे ज्यों,

माली ने फिर, तोड़ा क्यों।
सोच रही बहू आँगन में,
थोड़ा सँभल जाने तो दे।
सहारा मैं ही हूँ तेरा कल,
परिपक्व हो रही, मिलेगें फल।
थोड़ा अनुभव ले लेने दे,
अपने संग संग जी लेने दे।

एक 'पौधा' एक 'वृक्ष' बना,
दोनों का है, रुप नया।
पौधे मे अभी फूल खिले,
वृक्ष से पकते बीज मिले।
दोनों में कितनी है, दूरी?
नहीं समझते यह मजबूरी।
एक वृक्ष अनुभवी पौधे का,
उन कष्टों को सहने का।
फिर क्यो? यह द्वन्द यहाँ,
प्यार पर प्रतिबन्ध कहाँ?
करुणा के नीरों से सींचो,
एक दूजे के भावों को।
स्पर्श प्यार का देकर देखो,
एक दूजे के घावों को,...

व्यक्तित्व दर्पण

नाम - श्रीमती रचना सक्सेना

माता - स्व. श्रीमती सरोज सक्सेना

पिता - श्री सूरज प्रसाद सक्सेना

पति - श्री संजय सक्सेना

शिक्षा - एम.ए., बी.एड., संगीत प्रभाकर (सितार)

पता - 101/174-ए, अपोलीबाग, राजा ढ़िढ़वस की कोठी के सामने, इलाहाबाद - 211006

मो.नं. - 7376290559

उपलब्धियां
1. भारत के प्रतिभाशाली हिन्दी रचनाकार नामक साझा संकलन में दो कविताएं।
2. भारत के प्रतिभाशाली हिन्दी कवियत्रियां नामक साझा संकलन मे दो कविताएं।
3. काव्य अमृत नामक साझा संकलन में दो कविताएं।
4. रंगोली पत्रिका लखमीपुर के हर अंक में कविताओं का प्रकाशन।
5. अनन्तिमा (कानपुर) में कविताओं का प्रकाशन।
6. प्रेरणा अंक - 51, प्रेरण अंशु, पंखुड़ी आदि पत्रिकाओं में कविताओं का प्रकाशन।
7. अंतरा शब्द शक्ति में केन्द्रीय रचनाकार के रुप में 'सृजक-सृजन समीक्षा रचना सक्सेना' नामक पुस्तक का प्रकाशन।
8. रुहेलखण्ड प्रकाश हिन्दी साप्ताहिक (बरेली), प्रतिक्षण टाइम्स बहराइच, कायस्थ रश्मि (बरेली)आदि मे रचनाओं का प्रकाशन, लोकजंग पेपर (भोपाल) में कविताओं का प्रकाशन

सम्मान - साहित्य एवं सांस्कृतिक मंच (हिन्दी साहित्य शोध अकादमी, राजस्थान) द्वारा फेसबुक साहित्य पहेली क्रमांक 9 में सर्वश्रेष्ठ साहित्य सम्मान।

Women आवाज़ आधी आबादी की गूँज...
www.WomenAawaz.com

अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com

978-93-88102-36-0

मूल्य 40/-

१५, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी, जि. बालाघाट (म.प्र.) पिन ४८१३३१, संपर्क- ९४२४७६५२५९, अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com